भारतीय परंपरा में अट्ठारह विद्यास्थान

डॉ. सुबोधकांत मिश्र
सहायक अध्यापक, सेण्टर फॉर इंडिक स्टडीज,
इंडस विश्वविद्यालय,
अहमदाबाद, गुजरात
Email: subodhkantats@gmail.com

'भारतस्य द्वे प्रतिष्ठे,संस्कृतसंस्कृतिस्तथा' इस कथन के ही आलोक में अथाह ज्ञान राशि को स्वयं में समाहित किये हुए, अनंत काल से अनवरत, संस्कृत ने भारतीय संस्कृति के प्राण कहे जाने वाले शास्त्रों ग्रंथों को संजोने का काम किया। ज्ञान रूपी प्रकाश में निरत रहने वाले भारत की इन शास्त्रीय विद्याओं को कुल 18 भागों में वर्गीकृत किया गया। 18 के अन्यान्य उदाहारण भी हमारे समक्ष उपस्थित हैं । इनमें प्रमुख रूपेण 18 पुराण और 18 उपपुराण 18 स्मृतियाँ हैं। भगवद्गीता में 18 अध्याय हैं, और महाभारत पाठ में 18 खंड (पर्वण) हैं। महाभारत का युद्ध 18 दिनों तक चला था। युद्ध के बाद, पांडवों ने 36 वर्षों तक शासन किया (18 गुणा 2)। हम 18 के कुछ अन्य समूह को भी बाँट सकते हैं: जैसे 18 विवाद-पद (कानून की अदालत में मुकदमा), 18 धान्य (अनाज के प्रकार), या 18 उपकार (देवताओं को पूजा के रूप में दी जाने वाली सेवाएँ)।

भारतीय परंपरा वास्तव में मानवीय उपलब्धियों का सार प्रस्तुत करती है। क्योंकि, पाश्चात्य सभ्यता ने भौतिक क्षेत्रों में विभिन्न उपलब्धियाँ हासिल की हैं जबकिजहाँ हमारी दृष्टि बाहर की ओर मुड़ी हुई है, यह केवल हिंदू ही हैं जिन्होंने दोनों क्षेत्रोंअर्थात लौकिक और पारलौकिक में सफलता प्राप्त की है। साथ ही मनुष्यों और प्रकृति के प्रति उदार दृष्टिकोण से रहित, पाश्चात्य सभ्यता ने अधिकांशतः अन्य सभी संस्कृतियों कीऔर सामान्य रूप से प्रकृति की भीकेवल विनाश की एक श्रृंखला ही बनायी है। आज हम जिस प्रलयकारी जलवायु संकट का सामना कर रहे हैं, वह उत्तरार्द्ध का एक उदाहरण है, और दुनिया भर में सौ से अधिक देशों का बलपूर्वक धर्मांतरण और विजय, पूर्वार्ध का एक उदाहरण है। इसके विपरीत, सनातन मत ने हमेशा सभी के कल्याण की कामना की है, जैसा कि प्रसिद्ध श्लोक में परिलक्षित होता है:

सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयाः, |

जम्बूद्वीप the e-Journal of Indic Studies
Volume 3, Issue 2, 2024, p. 81-88, ISSN 2583-6331
©Indira Gandhi National Open University

सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चिद् दुःखभाग भवेत् ||

यह वास्तव में सामान्य रूप से मनुष्यों की स्वाभाविक चिंता होनी चाहिए; सभी की भलाई के बारे में चिंतित होना; अन्यथा, हम पशुओं से भी निकृष्ट हैं। उचित शिक्षा ही हमें इस आदर्श तक पहुँचने में सक्षम बनाती है।

मनुष्य को क्या पहचान देता है इसके चिंतन से हमेंसंस्कृत में एक प्रसिद्ध श्लोक कहता है कि चार वस्तुएं अर्थात भोजन, नींद, भयऔर संभोग, सभी जानवरों और मनुष्यों में समान हैं; हालाँकि, केवल एक चीज, मनुष्य को जानवरों से अलग करती है, और वह विशेषता है धर्म।इसे निम्न श्लोक के कथन से समझा जा सकता है

आहार-निद्रा-भय-मैथुनं च , सामान्यं एतत पशुभिर् नाराणाम् |

धर्मो नाराणाम् अधिको विशेषः,धर्मेण हीनः पशुभिः समानः ||[i]

श्लोक के अर्थ की सराहना में धर्म की उचित समझ शामिल है - जिसका एक ओर तो किसी भी गैर-भारतीय भाषा के एक भी शब्द में अनुवाद करना असंभव है, और दूसरी ओर, यह अपने आप में परिभाषित करने के लिए बहुत सूक्ष्म है। धर्म क्या है? धर्म शब्द कई अतिव्यापी (और व्युत्पन्न) अर्थों से भरा हुआ है, यही कारण है कि इसका उदाहरण के लिए यूरोपीय भाषाओं में अनुवाद करना आसान नहीं है। एक तरह से, धर्म वह है जो चीजों को वह बनाता है जो वेयथार्थ रूप में हैं। किसी भी प्रणाली के अच्छी तरह से काम करने के लिए, सभी घटकों को वैसे ही काम करना चाहिए जैसा उन्हें करना चाहिए; समाज के स्वस्थ रहने के लिए, विभिन्न वर्गों को अपनी भूमिका अच्छी तरह से निभानी चाहिए: दूसरे शब्दों में, उन्हें सभी को अपने धर्म, "स्वभाव" पर कायम रहना चाहिए। धर्म आध्यात्मिक विकास का प्राथमिक साधन भी है, जिसे कभी-कभी आलंकारिक रूप से "ऊपर की ओर गतिशीलता" (आधुनिक उपयोग के तुच्छ भौतिकवादी अर्थ में नहीं) के रूप में दर्शाया जाता है - जैसा कि सांख्य-कारिका में कहा गया है: **धर्मेन गमनं ऊर्ध्वम्।**[ii] आध्यात्मिक विकास नग्न इंद्रियों या सामान्य ज्ञान द्वारा समझने योग्य, मापने योग्य तो बिलकुल भी नहीं है। यह तकनीकी है - इसलिए, स्वस्थ जीवन या कानूनी सुरक्षा के बराबर है, जहाँ चिकित्सा और कानूनी विशेषज्ञों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है, लेकिन एक आम आदमी इसकी बारीकियों को समझने में विफल हो सकता है, क्योंकि वे उसे भ्रमित करने के लिए पर्याप्त जटिल हैं।

धर्म और विद्या

©Indira Gandhi National Open University

सारतः धर्म को किसी चीज़ की मूल प्रकृति के रूप में वर्णित किया जा सकता है, याएक ऐसा कार्य जो किसी चीज़ को उसकी मूल प्रकृति में पुनर्स्थापित करता है - पूरी तरह से, या कम से कम आंशिक रूप से उसे धर्म कहा जा सकता है।

यह याज्ञवल्क्य के कथन से समझा जा सकता है, जो कहते हैं किसर्वोच्च धर्म योग के माध्यम से स्वयं को देखना है।

अयं तु परमो धर्मो यद् योगेनात्मा-दर्शनम् |[iii]

प्रत्येक प्राणी का वास्तविक स्वरूप अमरता है, और वह ज्ञान जो व्यक्ति को उसी की ओर ले जाता है, विद्या कहलाता है। मनु कहते हैं: **विद्यायामृतं अश्नुते**[iv] (मनु-स्मृति 12.104) जीवन की जटिलता को देखते हुए, ऐसे ज्ञान का संहिताकरण जो व्यक्ति को आध्यात्मिक विकास की ओर ले जाता है, लेकिन साथ ही साथ सांसारिक समृद्धि में किसी भी तरह की बाधा के बिना, जटिल और व्यापक होना भी स्वाभाविक है। कर्नाटक के एक महान योगी श्रीरंगममहागुरु (1913-1969) ने संक्षेप में कहा, **"धर्म के ज्ञान की उत्पत्ति विद्यास्थानों का लक्ष्य है।"**[v] । उपनिषद विद्या को दो भागों में विभाजित करते हैं, अर्थात परा और अपरा। जबकि वैदिक विद्या के ज्ञान को सर्वोच्च ज्ञान मानना ही समझ में आता है, उपनिषद कहते हैं कि ब्रह्म के ज्ञाता घोषणा करते हैं कि वेदों और वेदांगों का ज्ञान वास्तव में एक "निम्न ज्ञान (अपरा)" है, जबकि जो अविनाशी (अक्षर) की प्राप्ति की ओर ले जाता है वह "उच्चतर (परा)" है। मुण्डकोपनिषद कहता है:**"तत्रापरा ऋग्वेदो यजुर्वेदसामवेदोऽथर्ववेदशशिक्षा कल्पो व्याकरणं निरुक्तं छन्दो ज्योतिषमिति ।अथ परा यया तदक्षरमधिगम्यते।"**[vi] जैसा कि उपनिषद स्वयं शीघ्र बाद में स्पष्ट करता है, अक्षर वह है जिससे ब्रह्मांड उत्पन्न होता है **"अक्षरात् सम्भवतिह विश्वम्"।**[vii] ज्ञान का धारण और संचरण जबकि उदासीन आम आदमी अज्ञानी बने रहने में संतुष्ट रहता है, केवल कुछ ही ग्रंथों में संहिताबद्ध ज्ञान को धारण करने का प्रयास करते हैं; उनमें से भी, कुछ ही इसे याद रखते हैं; और भी कम लोग इसे समझने का प्रयास करते हैं। लेकिन सबसे अच्छे वे हैं जो ज्ञान को अपने जीवन में प्रभाव में लाते हैं। ऐसा मनु कहते हैं :

अज्ञेय ग्रन्थिनाः श्रेष्ठ ग्रन्थिभ्यो धारिणो वराह ।

धारिभ्यो ज्ञानिनः श्रेष्ठ ज्ञानीभ्यो व्यवहारिनः।।[viii]

याज्ञवल्क्यस्मृति पर अपनी टिप्पणी में विज्ञानेश्वर ने दक्ष का सन्दर्भ दिया है, जिन्होंने कहा है कि ज्ञान पाँच तरीकों से विकसित होता है - **स्वरकरण, विचार,**

©Indira Gandhi National Open University

अभ्यास, जप और दान - अर्थात ग्रहण, मनन, अभ्यास, वर्णन और प्रदान करना।[ix] प्राचीन उपनिषद तैत्तिरीय में स्वाध्याय और प्रवचन पर जोर दिया गया है।[x] इस आध्यात्मिक आदेश को पूरी गंभीरता से लागू किया गया, क्योंकि उपनिषद इसे सभी आध्यात्मिक अभ्यासों का सामान्य कारक कहता है और घोषणा करता है कि यहअपने सार में तप का गठन करता है।

ज्ञान का विस्तार

समाज में प्राचीन काल में भी ज्ञान के संहिताकरण और अनुशासन की खेती के अनेक संदर्भ मिलते हैं। उदाहरणतया :गोपथ-ब्राह्मणमें दस विद्याओं का उल्लेख है।[xi] छांदोग्य उपनिषद में इनकी संख्या दोगुनी है, जिसमें 4 वेद, इतिहास और पुराण, पितृ और दैव, क्षत्र-विद्या और नक्षत्र विद्या शामिल हैं [xii]

ज्ञान की चौदह शाखाएँ

याज्ञवल्क्य ने अपनी स्मृति में 14 विद्याएँ सूचीबद्ध की हैं। कालिदास के रघुवंशमें भी चौदह का उल्लेख है, जहाँ ऋषि वरतंतु के शिष्य कौत्स ने अपने गुरु से चौदह विद्याएँ प्राप्त की थीं।[xiii] यहां तक कि छठी शताब्दी ई. के एक शिलालेख में भी इन चौदह का उल्लेख मिलता है। याज्ञवल्क्य द्वारा दी गई सूची इस प्रकार है:

पुराण-न्याय-मीमांसा-धर्मशास्त्रांग-मिश्रिताः |

वेद स्थानानि विद्यानं धर्मस्य च चतुर्दशा ||[xiv]

याज्ञवल्क्य-स्मृति के प्रसिद्ध टीकाकार विज्ञानेश्वर ने अपनी मिताक्षरा में इनकी व्याख्या इस प्रकार की है: 1. पुराण = ब्रह्म जैसे पुराण 2. न्याय = तर्क (तर्क-विद्या) 3. मीमांसा = वैदिक व्याख्या 4. धर्मशास्त्र = मनु के समान रचनाएँ 5-10. अंग = व्याकरण से शुरू होने वाले छह अंग। 11-14. वेद = 4 वेद उन्होंने स्थान को हेतु (कारण) के रूप में परिभाषित किया है। ये चौदह ही धर्म के हेतु हैं। इनके इतर हेमाद्रि नामक एक अन्य ग्रंथ में, हमें चार और विद्याओं का उल्लेख मिलता है। उन्होंने इन्हें जोड़ा, इस प्रकार 18 विद्याओं की सूची बनाई15. आयुर्वेद16. धनुर्वेद17. गंधर्ववेद, और18. अर्थशास्त्र।ये चारों मिलकर उपवेद कहलाते हैं।

इन 18 शाखाओं पर एक संक्षिप्त दृष्टिपात करने पर निम्न क्रम पाते है।

1. चार वेद (1-4)

वेद शब्द का शाब्दिक अर्थ है ज्ञान। संज्ञा होने के अलावा, यह शब्द वैदिक और शास्त्रीय संस्कृत साहित्य में कई अंशों में क्रिया के रूप में भी आता है, जैसे **"या एवं**

©Indira Gandhi National Open University

वेद"[xv] (जैसे बृहदारण्यकोपनिषद 5.7.1, महानरायणोपनिषद 17.1) जिसका अर्थ है "[वह] जो [इस प्रकार] जानता है"। हमारे देश में यह एक प्राचीन कहावत है कि परम सौभाग्य की प्राप्ति तत्त्व-ज्ञान - सच्चे ज्ञान या आवश्यक समझ से होती है: **तत्त्व-ज्ञानात निःश्रेयसादिगमः**[xvi] (न्यायसूत्र 1.1)। अक्सर एक विस्तृत व्याख्या दी जाती है। तैत्तिरीय-संहिता पर अपने भाष्य (भाष्य) के परिचय में, वैदिक साहित्य के प्रसिद्ध टीकाकार सायण कहते हैं: इष्टप्राप्ति-अनिष्टपरिहारयोर् अलौकीकं उपायं यो ग्रंथो वेदयति, स वेदः। वह ग्रंथ जो हमें जो चाहिए उसकी प्राप्ति के लिए एक असाधारण साधन बताता है और जो नहीं चाहिए उससे बचने के लिए, वेद का निर्माण करता है। वेदों में जिस साधन का संकेत मिलता है, वह कुछ विशेष यज्ञों का प्रदर्शन है। जैसा कि वेदांग-ज्यौतिषमें बताया गया है, **"वेद हि यज्ञार्थं अभिप्रवृत्ताः"**[xvii]। यज्ञ के प्रदर्शन में चार भूमिकाएँ शामिल होती हैं, प्रत्येक वेद के अनुरूप एक। होता , अध्वर्यु, उद्गाता और ब्रह्मा क्रमशः ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद के स्वामियों की चार भूमिकाएँ हैं। मंत्रोच्चार करना, आहुति देना, संगीतमय ढंग से मंत्रोच्चार करना और सम्पूर्ण यज्ञ के प्रदर्शन की देख-रेख करना - ये सभी किसी भी यज्ञ के प्रदर्शन के पहलू हैं। प्रत्येक वेद के चार विभाग हैं - संहिता, ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषद, जिसमें पहले दो भाग कर्म या यज्ञीय कार्य पर और अंतिम दो भाग ज्ञान या उसके पीछे की बुद्धि परकेंद्रित हैं । ये दोनों भाग क्रमशः कर्मकाण्ड और ज्ञानकाण्ड बनाते हैं, जो मिलकर चित्र को पूरा करते हैं।

2. चार उपवेद (5-8)

हम चार उपवेदों पर आते हैं। प्रत्येक वेद का अपना उपवेद है। आयुर्वेद ऋग्वेद का उपवेद है (हालाँकि कभी-कभी इसे अथर्ववेद का उपवेद भी कहा जाता है)। आयुर्वेद का संबंध आयु, रोग, औषधियों या प्राणियों के जीवनकाल से है। बीमारी की उत्पत्ति और उनकी उचित दवा इसके मुख्य सरोकार हैं। यह विज्ञान प्रकृति के साथ जीवन के सामंजस्य और परिणामस्वरूप धातुसाम्य या विभिन्न धातुओं के बीच संतुलन की प्राप्ति से संबंधित है, जो हमारे शरीर का निर्माण करने वाले तत्व हैं - जिससे हमारी आध्यात्मिक भलाई होती है। धनुर्वेद हथियारों और मिसाइलों, शास्त्रों और अस्त्रों के संचालन के साथ-साथ युद्ध के मैदान में व्यूह या तरीके वाली सारणी बनाने और युद्ध की विभिन्न रणनीतियों से संबंधित है। धनुर्वेद को यजुर्वेद का उपवेद माना जाता है। सामवेद का उपवेद गंधर्ववेद या संगीत है। उचित भावनाओं को व्यक्त करने के उद्देश्य से तथा भाव और ताल के अनुरूप उचित ताल

©Indira Gandhi National Open University

पर संगीतबद्ध किया जाना इस वेद का विषय है। अथर्ववेद का उपवेद अर्थशास्त्र है। यह राजनीति के विज्ञान से संबंधित है। यदि राजा न हो तो मत्स्य-न्याय या जंगल का कानून लागू होगा। न्याय या धर्म की रक्षा करना राजा का प्राथमिक कर्तव्य है, तथा धर्म के विरोधियों को परास्त करना भी उसका कर्तव्य है। विभिन्न वर्णों और आश्रमों के सदस्यों द्वारा अपनी-अपनी भूमिकाओं और नियमों के पालन पर ध्यान देकर समाज के मानदंडों का नियमन करना तथा उपदेशों की अपेक्षा व्यवहार द्वारा नागरिकों के समक्ष उदाहरण प्रस्तुत करने का कठोर प्रयास करना भी राजा का कार्य है। जैसा कि लोकोक्ति है, **यथा राजा तथा प्रजाः।**

3. छह वेदांग (9-14)

वेदों के छह अंगों पर एक दृष्टि डालते हैं, जिन्हें वेदांग कहा जाता है। उनमें से पहला, शिक्षा, वैदिक ग्रंथों की खेती के लिए आवश्यक ध्वन्यात्मकता से संबंधित है। इसका संबंध स्वाभाविक रूप से उच्चारण और छंद की लंबाई, ध्वनियों की उत्पत्ति और वैदिक पाठ में अक्षरों के उचित उच्चारण में शामिल प्रयासों से है। अगला व्याकरण है, व्याकरण, जो व्याकरणिक रूप से सही वाक्यों में विचारों की उचित अभिव्यक्ति से संबंधित है - सभी शब्दों के विश्लेषण की नींव पर इसके आगे के घटकों जैसे कि मूल (धातु) और प्रत्यय (प्रत्यय) आदि के साथ-साथ शब्द निर्माण और व्यंजन, संयोजन और विघटन, वाक्यविन्यास और शब्दार्थ के सिद्धांतों पर आधारित हैं। छंद या छंदशास्त्र छंद रचनाओं से के छन्दों के विस्तार, सुर के बिंदु, छन्दों की विविधता और वर्गीकरण इत्यादि से संबंधित है । निरुक्त शब्द-उत्पत्ति से संबंधित है, शब्द निर्माण के अनोखे तरीकों को उजागर करता है, और अर्थ के मूल में प्रवेश करता है, इस प्रकार वैदिक व्याख्या में एक प्रमुख भूमिका निभाता है। इसे वैदिक शब्दकोष भी कह सकते हैं। ज्योतिष या प्रकाशमानों का अध्ययन ग्रहों और नक्षत्रों की गति से संबंधित है, जिसकी गणना से यज्ञों के प्रदर्शन के उचित क्षण का पता लगाने में मदद मिलती है। और अंत में, कल्प, सामान्य और विशेष यज्ञों के विवरण और प्रक्रियाओं से संबंधित है, साथ ही यज्ञों के विशेष फलों से संबंधित तरीकों में वेदियों की जटिल व्यवस्था भी है। इसके चार वर्गीकरण मिलतें हैं : श्रौतसूत्र, धर्मसूत्र, शुल्बसूत्र और गृह्यसूत्र ।

4. अतिरिक्त चार (15-18)

शेष बचे अंतिम चार हैं मीमांसा, न्यायविस्तार, धर्मशास्त्र और पुराण। मीमांसा विशेष रूप से वैदिक वाक्यों की व्याख्या का विज्ञान है। वैदिक वाक्य कभी-कभी

©Indira Gandhi National Open University

कई व्याख्याओं के लिए खुले होते हैं, और इसलिए व्याख्या के ठोस मानदंडों के विकास की दिशा में एक व्यवस्थित प्रयास एक आवश्यकता बन जाता है। यह कर्म-कांड और ज्ञान-कांड दोनों के वाक्यों के संबंध में सही है। धर्मशास्त्र, जिसे स्मृति भी कहा जाता है, यह विभिन्न वर्णों और आश्रमों की जीवन शैली के तरीके, नागरिक और आपराधिक कानून के मुद्दों और आध्यात्मिक विकास के लिए अनुकूल संस्कारों (कभी-कभी "संस्कारों" के रूप में अनुवादित) पर ध्यान देता है। न्याय तर्क से संबंधित है, वैध ज्ञान के साधनों से संबंधित मुद्दों को संभालता है, और अधिक विशेष रूप से भ्रामक तर्क से निपटता है, और चीजों को सात्त्विक श्रेणियों के आधार पर सावधानीपूर्वक व्युत्पन्न परिप्रेक्ष्य में रखता है। और अंत में, पुराण, जिन्हें आम तौर पर "पौराणिक कथा" कहा जाता है, एक ओर हमें वैदिक अतीत से जोड़ने की भूमिका निभाते हैं, और दूसरी ओर आम आदमी के लिए वास्तविक विश्वकोश के रूप में कार्य करते हैं। ब्रह्मांड विज्ञान या ब्रह्मांड विज्ञान के मुद्दे, राजाओं की वंशावली और पवित्र स्थानों की पवित्रता, नियमित और विशेष व्रत, और ज्ञान की हर शाखा का सारांश उनके दायरे में आता है। इसके पांच भेद प्राप्त हैं : सर्ग, प्रतिसर्ग, वंश, मन्वंतर और वंशानुचरित, जो सांसारिक उद्भव को परिभाषित करते हैं । अठारह पुराण इस प्रकार सामान्य ज्ञान के साथ-साथ भारतीय ऋषियों और द्रष्टाओं की विशेष उपलब्धियों का विशाल सम्पत्ति हैं, जो सदियों के इतिहास को समेटे हुए हैं, फिर भी कार्रवाई और रहस्य की कहानियों से भरपूर हैं, जिससे आम और कुलीन दोनों के लिए मनोरंजन, शिक्षा और उत्कृष्टता का मिश्रण होता है ।

निष्कर्ष

सारतः सामान्य टिप्पणी के साथ निष्कर्ष रूप में कह सकते हैं कि जो सभी 18 विद्यास्थानों से संबंधित है, जैसा कि विज्ञानेश्वर ने याज्ञवल्क्य स्मृति पर अपने मिताक्षरा में किया है,जहाँ उन्होंने विद्या को पुरुषार्थ-साधना के रूप में परिभाषित किया है ।[xviii] सभी विद्याएँ, सामूहिक और व्यक्तिगत रूप से, पुरुषार्थ अर्थात धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति में सहायक होती हैं, जो सभी मानवीय प्रयासों का अंतिम लक्ष्य है । कोई भी वैध मानवीय गतिविधि नहीं हो सकती जो पुरुषार्थ के क्षेत्र में न आती हो। श्रीरंगमहागुरु की चेतावनी यहाँ प्रासंगिक है: "आप सभी एक अर्थ में "शिक्षित" हो सकते हैं; लेकिन यह पश्चिमी लोगों द्वारा दिया गया प्रमाण पत्र है। यदि हम स्वयं ऋषियों से इस बारे में पूछें, तो वे बिना किसी हिचकिचाहट के हमें अशिक्षित कहकर फटकार लगाएँगे। हमें वास्तव में ऐसे

©Indira Gandhi National Open University

अर्थ में शिक्षित होने की आवश्यकता है, जिसे ऋषि स्वीकार करें।"[xix] (श्रीरंगवाकनामृत: पृष्ठ 175)। हमें संपूर्ण शैक्षिक योजना को फिर से तैयार करना होगा, ताकि यह अक्षर की ओर पुनः उन्मुख हो, जो सृष्टि का मूल स्रोत है, जिसकी बात मुण्डक ने की है। हमारे ऊपर जो अनेक ऋण हैं, उनमें से इस ऋण का भुगतान आज सबसे महत्वपूर्ण है।

ग्रंथ सूची :

[i]महाभारत 12.294.29, महाभारत (1957)। गीता प्रेस, गोरखपुर।

[ii]सांख्य-कारिका (44)कोलब्रुक, एच. टी. (सं.) (1887)। गौडपाद की टिप्पणी के साथ सांख्यकारिका। तुकाराम तात्या, बम्बई।

[iii]याज्ञवल्क्य-स्मृति 1.8, आचार्य, एन.आर. (सं.) (1949), याज्ञवल्क्यस्मृति विज्ञानेश्वर के मिताक्षरा के साथ, निर्णय सागर प्रेस, बम्बई।

[iv]मनु-स्मृति 12.104, शास्त्री, जे.एल. (सं.) (1983)। कुल्लुकभट्ट की मन्वार्थमुक्तावली के साथ मनुस्मृति। मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।

[v]श्रीरंगवचनमृत, पृष्ठ 177, श्री श्री रंगप्रिया, और छायापति (सं.) (2019) श्रीरंगवाचनामृत (भाग 1-4)।अष्टांग योग विज्ञान मंदिरम, बेंगलुरु।

[vi]मुण्डकोपनिषद 1.1.5, लिमये, आचार्य वी.पी., और वाडेकर, आर.डी. (सं.) (1958)। अठारह प्रधान उपनिषद। वैदिक समशोधन मंडल, पूना।

[vii]मुण्डकोपनिषद 1.1.7, लिमये, आचार्य वी.पी., और वाडेकर, आर.डी. (सं.) (1958)। अठारह प्रधान उपनिषद। वैदिक समशोधन मंडल, पूना।

[viii]मनु-स्मृति 12.103, शास्त्री, जे.एल. (सं.) (1983)। कुल्लुकभट्ट की मन्वार्थमुक्तावली के साथ मनुस्मृति। मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।

[ix]याज्ञवल्क्य स्मृति 3.310, आचार्य, एन.आर. (सं.) (1949), याज्ञवल्क्यस्मृति विज्ञानेश्वर के मिताक्षरा के साथ, निर्णय सागर प्रेस, बम्बई।

[x]तैत्तिरीय उपनिषद 1.11, लिमये, आचार्य वी.पी., और वाडेकर, आर.डी. (सं.) (1958)। अठारह प्रधान उपनिषद। वैदिक समशोधन मंडल, पूना।

[xi]गोपथ-ब्राह्मण 2.10, मित्रा, आर.एल. (एड.) (1972)। गोपथब्राह्मण। इंडोलॉजिकल पब्लिशिंग हाउस, वाराणसी।

[xii]छांदोग्य उपनिषद 7.1.2,लिमये, आचार्य वी.पी., और वाडेकर, आर.डी. (सं.) (1958)। अठारह प्रधान उपनिषद। वैदिक समशोधन मंडल, पूना।

[xiii]रघुवंश 5.21, जोगलेकर, के.एम. (सं.) (1916)। मल्लिनाथ की संजीवनी सहित रघुवंश।निर्णय सागर प्रेस, बम्बई।

[xiv]याज्ञवल्क्य-स्मृति 1.3आचार्य, एन.आर. (सं.) (1949), याज्ञवल्क्यस्मृति विज्ञानेश्वर के मिताक्षरा के साथ, निर्णय सागर प्रेस, बम्बई।

[xv]जैसे बृहदारण्यकोपनिषद 5.7.1,लिमये, आचार्य वी.पी., और वाडेकर, आर.डी. (सं.) (1958)। अठारह प्रधान उपनिषद। वैदिक समशोधन मंडल, पूना।&महानरायणोपनिषद 17.1स्वामी विमलानंद. (सं.) (2004)। महानरायणोपनिषद. श्री रामकृष्ण मठ, चेन्नई।

[xvi]न्यायसूत्र 1.1, झा, जी. (सं.) (1984). न्यायसूत्र. मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।

[xvii]वेदांग-ज्योतिष1.3, द्विवेदी, सुधाकर. (सं.) (1906)। सुधाकर भाष्यम् सहित ज्यौतिषवेदांगम्। प्रभाकरी एंड कंपनी, बनारस।

[xviii]याज्ञवल्क्य स्मृति 1.3, आचार्य, एन.आर. (सं.) (1949), याज्ञवल्क्यस्मृति विज्ञानेश्वर के मिताक्षरा के साथ, निर्णय सागर प्रेस, बम्बई।

[xix]श्रीरंगवाकनामृत: पृष्ठ 175, श्री श्री रंगप्रिया, और छायापति (सं.) (2019) श्रीरंगवाचनामृत (भाग 1-4)।अष्टांग योग विज्ञान मंदिरम, बेंगलुरु।

©Indira Gandhi National Open University